



# भक्ति, नैतिक प्रतिरोध और पिंगल छंद: हरियाणवी रागणी परंपरा में 'किस्सा भगत पूरणमल' का समालोचनात्मक अध्ययन (रागणी 9-18 के संदर्भ में)

लेखक

आनन्द कुमार आशोधिया

स्वतंत्र शोधकर्ता एवं पूर्व वारंट ऑफिसर, भारतीय वायु सेना  
शाहपुर तुर्क, जिला सोनीपत, हरियाणा – 131001

## सार

यह शोध-पत्र किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9-18 का हरियाणवी रागणी परंपरा के संदर्भ में समालोचनात्मक अध्ययन प्रस्तुत करता है। अध्ययन का उद्देश्य यह स्पष्ट करना है कि लोक-कथा, भक्ति, नैतिक संघर्ष, वैराग्य और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे तत्व रागणी के माध्यम से किस प्रकार एक सशक्त साहित्यिक और सांस्कृतिक अभिव्यक्ति का रूप ग्रहण करते हैं। विशेष रूप से पूरणमल के चरित्र-विकास को एक राजकुमार से संन्यासी और अंततः लोक-आध्यात्मिक आदर्श के रूप में विश्लेषित किया गया है।

यह अध्ययन गुणात्मक शोध-पद्धति पर आधारित है, जिसमें पाठ-विश्लेषण, सांस्कृतिक-आलोचनात्मक दृष्टिकोण तथा पिंगल एवं छंदात्मक विश्लेषण का समन्वित प्रयोग किया गया है। रागणी 9-18 के चयनित पदों और पंक्तियों का संदर्भानुसार अध्ययन करते हुए उनके कथात्मक, प्रतीकात्मक और भावात्मक आयामों की व्याख्या की गई है। साथ ही मात्रा-विन्यास, यति, तुकांत-योजना और ध्वनि-अलंकारों का विश्लेषण किया गया है।

अध्ययन के निष्कर्ष यह दर्शाते हैं कि ये रागनियाँ केवल लोककथा का विस्तार नहीं हैं, बल्कि भक्ति, नैतिक प्रतिरोध, सामाजिक पुनर्संयोजन और सांस्कृतिक मूल्यों की जटिल संरचना को अभिव्यक्त करती हैं। पूरणमल का वैराग्य, सुंदरादे का समर्पण, इच्छरादे का मातृत्व और सुलेभान का पश्चाताप मिलकर एक ऐसे नैतिक तंत्र का निर्माण करते हैं, जिसमें व्यक्तिगत अनुभव सामूहिक चेतना से जुड़ जाते हैं। यह अध्ययन हरियाणवी रागणी परंपरा को एक संगठित साहित्यिक, सांस्कृतिक और छंदात्मक प्रणाली के रूप में स्थापित करता है।

## मुख्य शब्द

हरियाणवी रागणी परंपरा, किस्सा भगत पूरणमल, लोककथा, नैतिक प्रतिरोध, पिंगल छंद, लोक काव्यशास्त्र, वैराग्य, सांस्कृतिक मूल्य

## अध्ययन की पृष्ठभूमि एवं संदर्भ

किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9-18 हरियाणवी लोक-रागणी परंपरा में एक महत्वपूर्ण सांस्कृतिक, नैतिक और आध्यात्मिक संक्रमण-बिंदु का प्रतिनिधित्व करती हैं। यह खंड कथा को उसके मध्यवर्ती विस्तार से नाटकीय उत्कर्ष और अंततः नैतिक समाधान की दिशा में अग्रसर करता है। इस प्रक्रिया में व्यक्तिगत भावनाएँ, सामाजिक मान्यताएँ, पारिवारिक उत्तरदायित्व और आध्यात्मिक आदर्श परस्पर अंतःक्रिया करते हुए एक जटिल किंतु संतुलित कथात्मक संरचना का निर्माण करते हैं। इस खंड की पृष्ठभूमि को समझने के लिए इसे लोक-नाट्य, उत्तर भारतीय भक्ति-परंपरा, नाथ-संप्रदाय और उत्तर भारतीय सामाजिक संरचना के व्यापक परिप्रेक्ष्य में देखना आवश्यक है।

रागणी 9-13 मुख्यतः प्रेम, भक्ति और नैतिक द्वंद्व के त्रिकोण पर आधारित हैं। इस चरण में सुंदरादे और पूरणमल के मध्य संबंध केवल लौकिक आकर्षण तक सीमित नहीं रहता, बल्कि वह आध्यात्मिक स्वीकृति, सामाजिक वैधता और नैतिक अनुशासन की खोज में परिवर्तित हो जाता है। सुंदरादे का प्रेम एक व्यक्तिगत आग्रह मात्र नहीं रह जाता, बल्कि वह सामाजिक और धार्मिक संरचनाओं के भीतर अपनी वैधता की तलाश करता है। इसी संदर्भ में गुरु गोरखनाथ की उपस्थिति कथा को विशेष गहराई प्रदान करती है। वे केवल धार्मिक मार्गदर्शक के रूप में नहीं, बल्कि नैतिक निर्णय और आध्यात्मिक अनुशासन के केंद्रीय प्रतीक के रूप में उपस्थित होते हैं। उनके माध्यम से यह स्पष्ट होता है कि लोक-जीवन में गुरु-आज्ञा, धर्म और व्यक्तिगत इच्छा के बीच संतुलन स्थापित करना सामाजिक व्यवस्था का एक आवश्यक अंग था।

रागणी 14-18 में कथा का स्वरूप अधिक व्यापक और सामूहिक हो जाता है। यहाँ व्यक्तिगत संघर्ष पारिवारिक और राजकीय संदर्भों तक विस्तृत हो जाता है, जिससे कथा का नैतिक आयाम और अधिक गहन हो उठता है। पूरणमल का त्याग, उसका पुनरागमन और अंततः लोक-आदर्श के रूप में उसकी प्रतिष्ठा केवल एक व्यक्ति की आध्यात्मिक यात्रा नहीं है, बल्कि वह एक नैतिक प्रतिमान की पुनर्स्थापना का भी प्रतीक है। माँ इच्छरादे का विलाप और राजा सुलेभान का पश्चाताप तत्कालीन पारिवारिक और राजकीय संरचना में भावनात्मक उत्तरदायित्व, आत्मबोध और नैतिक पुनर्विचार की महत्ता को रेखांकित करते हैं। इस प्रकार कथा यह संकेत करती है कि सत्ता, मोह और स्वार्थ से प्रेरित निर्णय अंततः आत्मस्वीकार और प्रायश्चित्त की ओर ले जाते हैं, जो भारतीय लोक-साहित्य की एक महत्वपूर्ण विशेषता है।

सांस्कृतिक दृष्टि से रागणी 9-18 हरियाणवी लोक-जीवन की विविध परंपराओं और व्यवहारिक संरचनाओं का जीवंत चित्र प्रस्तुत करती हैं। भिक्षाटन, गुरु-शिष्य संबंध, विवाह-संस्कार, राज दरबारी संरचना और सामूहिक उत्सव जैसे तत्व इस खंड में केवल पृष्ठभूमि के रूप में नहीं, बल्कि सांस्कृतिक अर्थ-निर्माण के सक्रिय उपकरण के रूप में उपस्थित हैं। विशेष रूप से रागणी 18 में जन-समागम और सूखे बाग के पुनर्जीवन का प्रसंग सामूहिक चेतना, आध्यात्मिक पुनर्संयोजन और सामाजिक पुनर्स्थापना का प्रतीक बन जाता है। यह प्रसंग यह दर्शाता है कि लोक-समाज में धार्मिक और नैतिक आदर्श केवल व्यक्तिगत अनुभव तक सीमित नहीं रहते, बल्कि वे सामूहिक आस्था और सांस्कृतिक एकता का अभिन्न अंग बन जाते हैं।

साहित्यिक दृष्टि से रागणी 9-18 संवादात्मकता, करुणा, नाटकीयता और प्रतीकात्मकता के माध्यम से एक प्रभावशाली कथात्मक संरचना का निर्माण करती हैं। इन रागणियों में लोकभाषा की सहजता और भाव-अभिव्यक्ति की गहनता का ऐसा संतुलन दिखाई देता है, जो इन्हें केवल श्रव्य काव्य नहीं, बल्कि दृश्य और भावनात्मक अनुभव का भी माध्यम बनाता है। संवाद-प्रधान शैली कथा को बहुवाचिक स्वर प्रदान करती है, जहाँ विभिन्न पात्रों के माध्यम से प्रेम, वैराग्य, मातृत्व, पश्चाताप और सामाजिक उत्तरदायित्व जैसे विविध अनुभवों को अभिव्यक्ति मिलती है।

प्रस्तुत अध्ययन को लेखक के पूर्ववर्ती लोक-आख्यान और हरियाणवी रागणी परंपरा संबंधी अनुसंधानों की निरंतरता में भी देखा जा सकता है। पूर्व में लेखक द्वारा “हीर-राँझा रागणी संग्रह” तथा हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा के अंतर्गत रागणी 1-7, 8-16, 17-22 और 23-28 का पिंगल, सांस्कृतिक और लोक-आख्यानात्मक विश्लेषण प्रस्तुत किया जा चुका है। उन अध्ययनों में प्रेम-प्रधान लोकगाथा के रूप में हीर-राँझा के कथानक, लोकभाषा, छंद-विधान और सांस्कृतिक प्रतीकों का परीक्षण किया गया था। इसी प्रकार लेखक द्वारा किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 1-8 का

भी सांस्कृतिक, पिंगल और लोक-आख्यानात्मक विश्लेषण किया जा चुका है। वर्तमान अध्ययन उसी विमर्श को आगे बढ़ाता है, किंतु यहाँ प्रेम और विरह की अपेक्षा भक्ति, नैतिक प्रतिरोध, संत-परंपरा, सामाजिक पुनर्संरचना और आध्यात्मिक वैराग्य के आयाम अधिक प्रमुख रूप में उभरकर सामने आते हैं।

अतः रागणी 9-18 का यह खंड किस्सा भगत पूरणमल के अध्ययन के लिए एक अनिवार्य पृष्ठभूमि प्रस्तुत करता है, जिसमें भक्ति, नैतिकता, सामाजिक संरचना और लोक-सांस्कृतिक मूल्यों का बहुआयामी समन्वय दृष्टिगोचर होता है। यह खंड न केवल कथा के विकास को समझने में सहायक है, बल्कि हरियाणवी रागणी परंपरा की व्यापक सांस्कृतिक, साहित्यिक और दार्शनिक प्रासंगिकता को भी स्थापित करता है।

## साहित्य समीक्षा

हरियाणवी लोक-साहित्य, विशेषतः रागणी परंपरा, पर केंद्रित अध्ययन भारतीय लोककाव्य, भक्ति-विमर्श, सांस्कृतिक अध्ययन और छंदशास्त्रीय परंपराओं के व्यापक बौद्धिक परिप्रेक्ष्य से जुड़ा हुआ है। किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9-18 के वर्तमान अध्ययन को समझने के लिए उन पूर्ववर्ती साहित्यिक, सांस्कृतिक, दार्शनिक और संरचनात्मक अध्ययनों का अवलोकन आवश्यक है, जिन्होंने लोक-साहित्य, भक्ति-परंपरा और लोक-काव्यशास्त्र के अंतर्संबंधों को स्पष्ट किया है।

भारतीय काव्यशास्त्र और पिंगल परंपरा के संदर्भ में रामचंद्र शुक्ल की कृति हिंदी साहित्य का इतिहास अत्यंत महत्वपूर्ण मानी जाती है, जिसमें लोकधारा, भक्ति-साहित्य और सामाजिक यथार्थ के परस्पर संबंधों को ऐतिहासिक दृष्टि से व्याख्यायित किया गया है। इसी प्रकार हजारी प्रसाद द्विवेदी ने नाथ-संप्रदाय और भक्ति-आंदोलन पर अपने अध्ययनों में गुरु-शिष्य संबंध, वैराग्य, लोक-आध्यात्मिकता और संत-परंपरा के उन आयामों को उद्घाटित किया है, जो भगत पूरणमल की कथा-संरचना से प्रत्यक्ष रूप से संबद्ध हैं।

लोक-साहित्य और उसकी आलोचनात्मक संरचना के संदर्भ में नामवर सिंह के विचार विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने लोक और शास्त्र के अंतर्संबंधों को आधुनिक आलोचना के केंद्र में रखा। उनके अनुसार लोक-साहित्य केवल परंपरा का अवशेष नहीं, बल्कि सामाजिक अनुभवों और सांस्कृतिक चेतना का जीवंत दस्तावेज है। इसी क्रम में नगेन्द्र द्वारा प्रतिपादित काव्य-मीमांसा लोककाव्य की संरचनात्मक विशेषताओं, प्रतीक-योजना और भाव-संयोजन को समझने में सहायक सिद्ध होती है।

हरियाणवी लोक-साहित्य पर विशेष रूप से रघुवीर सिंह मथाना और केशव देव शर्मा के शोध उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने रागणी परंपरा की ऐतिहासिकता, प्रस्तुति-शैली, सामाजिक संदर्भ और भाषिक संरचना पर विस्तार से प्रकाश डाला है। इनके अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि रागणी केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि सामाजिक चेतना, नैतिक मूल्यों और लोक-सांस्कृतिक पहचान का सशक्त वाहक भी है।

भक्ति, लोकधर्म और सांस्कृतिक पुनरावृत्ति के संदर्भ में ए. के. रामानुजन के निबंध विशेष रूप से प्रासंगिक हैं। उन्होंने भारतीय लोककथाओं और लोक-आख्यानों की बहुस्तरीयता तथा पुनरावृत्ति सांस्कृतिक संरचनाओं की ओर संकेत करते हुए यह प्रतिपादित किया कि लोककथाएँ समय और समाज के साथ निरंतर नए अर्थ ग्रहण करती रहती हैं। इसी प्रकार शेल्डन पोलॉक ने भारतीय साहित्यिक परंपराओं में भाषा, शक्ति और संस्कृति के संबंधों का विश्लेषण करते हुए यह स्पष्ट किया है कि लोक और शास्त्र के बीच निरंतर अंतःक्रिया होती रहती है, जिसके परिणामस्वरूप सांस्कृतिक अभिव्यक्तियों के विविध रूप निर्मित होते हैं।

पाश्चात्य आलोचनात्मक सिद्धांतों के संदर्भ में मिखाइल बाख्तिन का संवादवाद और बहुस्वरिता संबंधी सिद्धांत इस अध्ययन के लिए विशेष रूप से उपयोगी है। बाख्तिन के अनुसार किसी भी कथात्मक संरचना में विभिन्न स्वरों, दृष्टिकोणों और सामाजिक अनुभवों की उपस्थिति उसे बहुवाचिक बनाती है। भगत पूरणमल की रागणियों में सुंदरादे, पूरणमल,

इच्छरादे, गुरु गोरखनाथ और राजा सुलेभान जैसे पात्रों के माध्यम से जो विविध नैतिक, भावनात्मक और सामाजिक दृष्टिकोण उभरते हैं, उन्हें बाख्तिन की बहुस्वरिता की अवधारणा के आलोक में समझा जा सकता है।

इसी प्रकार विक्टर टर्नर का अनुष्ठान और संक्रमण-अवस्था संबंधी सिद्धांत भी इस अध्ययन के लिए महत्वपूर्ण है। टर्नर के अनुसार संक्रमण की अवस्थाएँ व्यक्ति को उसकी पूर्व पहचान से मुक्त करके एक नई सांस्कृतिक और आध्यात्मिक पहचान प्रदान करती हैं। पूरणमल का राजकुमार से संन्यासी और अंततः लोक-आदर्श में रूपांतरण इसी प्रकार की संक्रमण-अवस्था का उदाहरण है, जिसमें वैराग्य और पुनर्जन्म जैसी अवधारणाएँ केंद्रीय भूमिका निभाती हैं।

सांस्कृतिक अध्ययन के क्षेत्र में क्लिफर्ड गीर्ज़ की “गहन सांस्कृतिक व्याख्या” और “संस्कृति को पाठ के रूप में पढ़ने” की अवधारणा भी प्रासंगिक है। गीर्ज़ के अनुसार किसी भी सांस्कृतिक क्रिया या लोक-परंपरा को उसके प्रतीकों, सामाजिक संदर्भों और सांस्कृतिक अर्थों के साथ पढ़ा जाना चाहिए। भगत पूरणमल की रागनियों में भिक्षाटन, गुरु-शिष्य संबंध, राजकीय संरचना, विवाह-संस्कार और जन-समागम जैसे प्रसंगों को गीर्ज़ की सांस्कृतिक व्याख्या-पद्धति के माध्यम से अधिक गहराई से समझा जा सकता है।

इसी क्रम में नॉर्थ्रॉप फ्राय का आद्यरूपात्मक आलोचना सिद्धांत भी उपयोगी सिद्ध होता है। फ्राय के अनुसार साहित्य में कुछ आदर्श चरित्र, प्रतीक और कथात्मक संरचनाएँ बार-बार पुनरावृत्त होती हैं। पूरणमल का त्यागी नायक, सुंदरादे का समर्पित स्त्री-पात्र, इच्छरादे का करुणामयी मातृत्व और सुलेभान का पश्चातापी शासक—ये सभी आद्यरूपात्मक संरचनाओं के रूप में देखे जा सकते हैं, जो भारतीय लोक-साहित्य की व्यापक परंपरा में निरंतर उपस्थित रहती हैं।

छंदशास्त्र के संदर्भ में केदारनाथ सिंह तथा विश्वनाथ प्रसाद मिश्र के कार्य उल्लेखनीय हैं, जिन्होंने मात्रा, लय, यति और ध्वनि के माध्यम से काव्यात्मक अभिव्यक्ति के सौंदर्य को स्पष्ट किया है। इनके अध्ययनों से यह स्पष्ट होता है कि लोककाव्य में भी छंद-विधान अत्यंत सुसंगठित, उद्देश्यपरक और भावानुकूल होता है।

इसके अतिरिक्त, समकालीन लोक-अध्ययन में कपिल कपूर और गणेश देवी के कार्य भारतीय भाषाओं, लोक-परंपराओं और सांस्कृतिक विविधताओं के संरक्षण की आवश्यकता को रेखांकित करते हैं। इनके अध्ययन यह संकेत देते हैं कि लोक-साहित्य केवल अतीत की सांस्कृतिक धरोहर नहीं, बल्कि वर्तमान सामाजिक चेतना और सांस्कृतिक अस्मिता का भी महत्वपूर्ण आधार है।

उपरोक्त सभी विद्वानों के अध्ययन यह स्पष्ट करते हैं कि लोक-साहित्य, भक्ति-विमर्श, सांस्कृतिक अध्ययन और छंद-परंपरा परस्पर जुड़े हुए क्षेत्र हैं, जिनका समन्वित अध्ययन आवश्यक है। प्रस्तुत शोध किस्सा भगत पूरणमल की रागनियों (विशेषतः 9–18) के माध्यम से कथात्मक संरचना, सांस्कृतिक संदर्भ, नैतिक प्रतिरोध, संवादात्मकता और पिंगल-छंद के आयामों को एकीकृत रूप में विश्लेषित करता है। इस प्रकार यह अध्ययन पूर्ववर्ती अनुसंधानों का विस्तार करते हुए हरियाणवी रागणी परंपरा को एक समृद्ध, संरचित और अंतरराष्ट्रीय स्तर पर प्रासंगिक साहित्यिक विधा के रूप में स्थापित करता है।

## शोध पद्धति

प्रस्तुत अध्ययन गुणात्मक शोध-पद्धति पर आधारित है, जिसका उद्देश्य किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9–18 में निहित कथात्मक, सांस्कृतिक, नैतिक और छंदात्मक आयामों का समन्वित विश्लेषण करना है। अध्ययन में पाठ, प्रसंग, संरचना और पिंगल—इन सभी स्तरों को एक-दूसरे से संबद्ध मानते हुए बहुस्तरीय पद्धति अपनाई गई है।

प्रथम स्तर पर मूल रागणी-पाठ का सूक्ष्म पाठ-विश्लेषण किया गया है। चयनित पंक्तियों और प्रसंगों के आधार पर उनके अर्थ, प्रतीक, भाव-संरचना तथा कथात्मक प्रयोजन की व्याख्या की गई है। उदाहरणार्थ, गुरु-समर्पण, कर्मवाद, वैराग्य, मातृत्व और पश्चाताप से संबंधित पंक्तियों को उनके सांस्कृतिक और नैतिक संदर्भों में पढ़ा गया है, जिससे यह स्पष्ट हो सके कि रचना में लोक-विश्वास, धार्मिक चेतना और सामाजिक उत्तरदायित्व किस प्रकार परस्पर जुड़े हुए हैं।

द्वितीय स्तर पर सांस्कृतिक-आलोचनात्मक दृष्टिकोण अपनाया गया है। इसके अंतर्गत गुरु-शिष्य संबंध, नारी-स्वर, लोक-आस्था, पारिवारिक संरचना, सत्ता-बोध और नैतिक प्रतिरोध जैसे आयामों का विश्लेषण किया गया है। विशेष रूप से सुंदरादे, इच्छरादे और सुलेभान जैसे पात्रों के माध्यम से यह समझने का प्रयास किया गया है कि लोक-रागणी परंपरा में भावनात्मक अनुभव किस प्रकार व्यापक सामाजिक अर्थ ग्रहण कर लेते हैं।

तृतीय स्तर पर पिंगल एवं छंदात्मक विश्लेषण को अध्ययन का प्रमुख आधार बनाया गया है। मात्रा-विन्यास, यति, तुकांत, पुनरावृत्ति तथा ध्वनि-संरचना के माध्यम से यह देखा गया है कि रागणी-छंद केवल गेयता का साधन नहीं, बल्कि भाव-अभिव्यक्ति और कथानक-विकास का सक्रिय उपकरण भी है। करुण प्रसंगों में विस्तारित यति, उपदेशात्मक अंशों में समतुकांत तथा उत्सवधर्मी प्रसंगों में तीव्र लय—इन सभी तत्वों का अध्ययन इसी दृष्टि से किया गया है।

अध्ययन में तुलनात्मक पद्धति का सीमित उपयोग भी किया गया है। भक्ति-साहित्य, नाथ परंपरा और अन्य लोक-आख्यानों के साथ किस्सा भगत पूरणमल के अंतर्संबंधों को रेखांकित करते हुए यह दिखाया गया है कि हरियाणवी रागणी परंपरा भारतीय सांस्कृतिक विमर्श का अभिन्न अंग है।

स्रोत-सामग्री के रूप में मूल रागणी-पाठ को प्राथमिक आधार बनाया गया है, जबकि लोक-साहित्य, भक्ति-विमर्श, सांस्कृतिक अध्ययन और छंदशास्त्र से संबंधित प्रामाणिक ग्रंथों का सहायक रूप में उपयोग किया गया है। इस प्रकार यह शोध-पद्धति पाठ, संस्कृति और छंद के अंतर्संबंधों को एकीकृत रूप में समझने का प्रयास करती है।

## कथात्मक एवं साहित्यिक विश्लेषण

किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9-18 कथा के मध्यवर्ती विस्तार से लेकर उसके नैतिक और आध्यात्मिक समाधान तक की एक क्रमबद्ध प्रक्रिया प्रस्तुत करती है। इस खंड में प्रेम, भक्ति, वैराग्य, पश्चाताप और सामाजिक पुनर्संयोजन के विविध आयाम क्रमशः विकसित होते हैं, जिसके कारण रचना केवल घटनाओं का अनुक्रम न रहकर एक बहुस्तरीय साहित्यिक संरचना का रूप ग्रहण कर लेती है।

रागणी 9-10 में कथा का केंद्र भक्ति, प्रेम और सामाजिक स्वीकृति है। सुंदरादे की प्रार्थना तथा गुरु गोरखनाथ की उपस्थिति यह संकेत देती है कि व्यक्तिगत इच्छा को धार्मिक और नैतिक वैधता के माध्यम से व्यक्त किया जाता है। इसी क्रम में कर्म, धर्म और गृहस्थ-जीवन से संबंधित विचार कथा को दार्शनिक आधार प्रदान करते हैं। यहाँ भक्ति और सामाजिक उत्तरदायित्व परस्पर विरोधी नहीं, बल्कि एक-दूसरे के पूरक रूप में प्रस्तुत होते हैं।

रागणी 11-13 में कथा का स्वर अधिक भावात्मक और द्वंद्वपूर्ण हो जाता है। पूरणमल का वैराग्य और सुंदरादे का समर्पण एक ऐसे संघर्ष को जन्म देते हैं, जिसमें प्रेम, त्याग और सामाजिक मर्यादा परस्पर टकराते हैं। इस चरण में संवादात्मकता अत्यंत महत्वपूर्ण हो जाती है, क्योंकि विभिन्न पात्र अपने-अपने दृष्टिकोणों के माध्यम से कथा को बहुवाचिक स्वर प्रदान करते हैं। सुंदरादे का चरित्र विशेष रूप से उल्लेखनीय है, क्योंकि उसके माध्यम से नारी-स्वर केवल प्रेम की अभिव्यक्ति नहीं, बल्कि भावनात्मक स्वायत्तता और सामाजिक असुरक्षा का भी प्रतिनिधित्व करता है।

रागणी 14-15 में कथा वैराग्य और आत्मबोध की दिशा में अग्रसर होती है। यात्रा, दूरी और विरक्ति के बिंब यहाँ आंतरिक परिवर्तन के प्रतीक बन जाते हैं। इस चरण में भाषा और छंद दोनों अपेक्षाकृत संयत हो जाते हैं, जिससे कथानक की गंभीरता और चिंतनशीलता अधिक सशक्त रूप में उभरती है।

रागणी 16-18 कथा के भावात्मक और नैतिक उत्कर्ष का प्रतिनिधित्व करती हैं। इच्छरादे और पूरणमल का पुनर्मिलन करुणा और वात्सल्य की चरम अभिव्यक्ति है, जबकि सुलेभान का पश्चाताप सत्ता, मोह और नैतिक विफलता के परिणामस्वरूप उत्पन्न आत्मबोध को उद्घाटित करता है। अंतिम रागणी में पूरणमल का व्यक्तित्व लोक-नायक और संत के रूप में प्रतिष्ठित होता है, जहाँ उनका त्याग और साधना सामूहिक आस्था तथा सांस्कृतिक पुनर्संरचना का आधार बन जाते हैं।

साहित्यिक दृष्टि से इन रागणियों में संवादात्मकता, प्रतीकात्मकता, दृश्यात्मकता और लोकभाषा की सजीवता का अत्यंत प्रभावी उपयोग हुआ है। करुण, शृंगार, वात्सल्य और शान्त रसों का संतुलित विकास रचना को भावात्मक गहराई प्रदान करता है। इस प्रकार रागणी 9-18 यह सिद्ध करती हैं कि हरियाणवी लोक-साहित्य केवल मनोरंजन का माध्यम नहीं, बल्कि एक गंभीर सांस्कृतिक और दार्शनिक विमर्श भी है।

### पिंगल एवं छंदात्मक विश्लेषण

किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9-18 का पिंगल एवं छंदात्मक अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि इन रचनाओं में छंद केवल लयात्मक अनुशासन नहीं, बल्कि कथात्मक गति, भाव-संवेदन और अर्थ-निर्माण का सक्रिय माध्यम है। मात्रा-विन्यास, यति, तुकांत और ध्वनि-साम्य के माध्यम से रचना में भावों की तीव्रता और कथानक की दिशा दोनों नियंत्रित होती हैं।

रागणी 9-10 में छंद का स्वर अपेक्षाकृत संतुलित और गंभीर है। भक्ति, प्रार्थना और गुरु-उपदेश से जुड़े प्रसंगों में मध्यम गति, समतुल्य मात्रा-विन्यास और स्पष्ट यति का प्रयोग किया गया है। इससे कथ्य में स्थिरता और गंभीरता आती है तथा उपदेशात्मक तत्व अधिक प्रभावी बनते हैं। पुनरावृत्ति और समतुकांत का प्रयोग लोक-श्रोताओं के लिए संदेश को स्मरणीय बनाता है।

रागणी 11-13 में छंद अधिक परिवर्तनशील और भाव-प्रधान हो जाता है। प्रेम, करुणा और वैराग्य के मिश्रित प्रसंगों के कारण यति का स्थान स्थिर नहीं रहता, बल्कि भावानुसार परिवर्तित होता है। संवादात्मक अंशों में लय का उतार-चढ़ाव पात्रों की मानसिक व्याकुलता और भावनात्मक तनाव को अधिक प्रभावी बनाता है। अनुप्रास, स्वर-साम्य और अंत्यानुप्रास जैसे ध्वनि-तत्त्व भी इस चरण में भाव-गहनता को बढ़ाते हैं।

रागणी 14-15 में कथा के साथ-साथ छंद भी संयमित हो जाता है। वैराग्य, दूरी और आत्मबोध से संबंधित प्रसंगों में लय अपेक्षाकृत मंथर और नियंत्रित दिखाई देती है। चरणों की लंबाई और तुकांत-योजना में नियमितता कथानक को गंभीर और चिंतनशील स्वर प्रदान करती है।

रागणी 16 में करुण और वात्सल्य का उत्कर्ष है, इसलिए यहाँ यति और विराम का विशेष महत्व है। भावात्मक ठहराव रचना की मार्मिकता को बढ़ाता है और मातृत्व की पीड़ा को अधिक प्रभावशाली बनाता है। इसके विपरीत, रागणी 17 में छंद पुनः संतुलित और गंभीर हो जाता है, जो आत्मस्वीकार और पश्चाताप की स्थिति के अनुकूल है। स्थिर लय और नियंत्रित तुकांत कथा के नैतिक पुनर्निर्माण को प्रतीकात्मक रूप से व्यक्त करते हैं।

रागणी 18 में छंद का स्वर सामूहिक और उत्सवधर्मी हो जाता है। तीव्र लय, पुनरावृत्ति और सघन तुकांत रचना को सामूहिक गेयता प्रदान करते हैं। इस चरण में छंद केवल समापन का साधन नहीं रहता, बल्कि सामूहिक आस्था और सांस्कृतिक पुनर्संयोजन का संवाहक बन जाता है।

समग्रतः, रागणी 9-18 का पिंगल-विधान यह सिद्ध करता है कि हरियाणवी रागणी परंपरा में छंद केवल तकनीकी संरचना नहीं, बल्कि अर्थ, भाव और सांस्कृतिक स्मृति का आधार भी है।

## चर्चा

प्रस्तुत अध्ययन यह स्पष्ट करता है कि किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9-18 एक सुसंगठित कथात्मक, सांस्कृतिक और काव्यात्मक संरचना का निर्माण करती हैं। इन रागणियों में पूरणमल का चरित्र एक पीड़ित राजकुमार से विकसित होकर नैतिक प्रतिरोध, आध्यात्मिक अनुशासन और सामाजिक पुनर्संयोजन के प्रतीक के रूप में उभरता है। यह रूपांतरण केवल व्यक्तिगत साधना का परिणाम नहीं, बल्कि लोक-समाज के लिए एक व्यापक नैतिक प्रतिमान का निर्माण भी है।

कथात्मक स्तर पर रागणी 9-18 का अनुक्रम अत्यंत सुनियोजित है। कथा प्रार्थना, गुरु-निर्देश, भावात्मक द्वंद्व, विरह, वैराग्य, पुनर्मिलन, पश्चाताप और सामाजिक पुनर्संरचना जैसे चरणों से होकर गुजरती है। यह संरचना संकेत करती है कि लोक-आख्यानों में घटनाएँ आकस्मिक न होकर एक पूर्व नियोजित नैतिक दिशा की ओर उन्मुख होती हैं।

साहित्यिक स्तर पर इन रागणियों में भाव-संयोजन का उच्च स्तर विद्यमान है। करुण, शृंगार, वात्सल्य और शान्त रसों का क्रमिक विकास रचना को बहुआयामी बनाता है। विशेष रूप से नारी-स्वर, मातृत्व और पश्चाताप से जुड़े प्रसंग यह स्पष्ट करते हैं कि लोकभाषा की सहजता जटिल भावनात्मक अनुभवों को अत्यंत प्रभावी ढंग से व्यक्त कर सकती है।

पिंगल और छंदात्मक विश्लेषण यह उद्घाटित करता है कि रागणी-छंद का प्रयोग पूरी तरह भावानुकूल है। करुण प्रसंगों में विस्तारित यति, उपदेशात्मक प्रसंगों में समतुकांत और सामूहिक प्रसंगों में तीव्र लय का प्रयोग यह सिद्ध करता है कि छंद यहाँ केवल गेयता का माध्यम नहीं, बल्कि अर्थ-निर्माण का सक्रिय उपकरण है।

सांस्कृतिक और नैतिक स्तर पर यह अध्ययन यह स्थापित करता है कि रागणी 9-18 में भक्ति केवल आध्यात्मिक अनुभव नहीं, बल्कि सामाजिक न्याय, नैतिक प्रतिरोध और सांस्कृतिक पुनर्संरचना का माध्यम भी है। पूरणमल का वैराग्य, सुंदरादे का समर्पण, इच्छरादे का मातृत्व और सुलेभान का पश्चाताप—ये सभी तत्व मिलकर एक ऐसे नैतिक ढाँचे का निर्माण करते हैं, जिसमें व्यक्तिगत आचरण और सामाजिक मूल्य परस्पर संबद्ध हो जाते हैं।

समग्रतः, यह अध्ययन इस निष्कर्ष पर पहुँचता है कि किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9-18 हरियाणवी लोक-साहित्य की एक सशक्त परंपरा का प्रतिनिधित्व करती हैं, जिसमें कथा, काव्य, छंद और संस्कृति का समन्वय अत्यंत स्वाभाविक रूप में दिखाई देता है।

## निष्कर्ष

प्रस्तुत अध्ययन यह प्रतिपादित करता है कि किस्सा भगत पूरणमल की रागणी 9-18 हरियाणवी लोक-साहित्य की एक सशक्त और बहुआयामी काव्य-परंपरा का प्रतिनिधित्व करती हैं। इन रागणियों में कथात्मक संरचना, भाव-संयोजन, पिंगल-आधारित छंद-विधान और सांस्कृतिक विमर्श का प्रभावी समन्वय दिखाई देता है। अध्ययन से स्पष्ट होता है कि पूरणमल का चरित्र एक पीड़ित राजकुमार से विकसित होकर नैतिक प्रतिरोध, वैराग्य और सामाजिक पुनर्संयोजन के प्रतीक के रूप में उभरता है।

रागणी 9-18 की संरचना प्रार्थना, प्रेम, त्याग, करुणा, पश्चाताप और पुनर्मिलन जैसे तत्वों के क्रमिक विकास पर आधारित है। “गुरु गोरख मैं तेरी शरण में कहया मानल्यो मेरा” जैसी पंक्तियाँ भक्ति और नैतिक मार्गदर्शन को व्यक्त करती हैं, जबकि “कृतल करण का हुक्म दिया मनै...” जैसी कथन आत्मस्वीकार और प्रायश्चित की प्रक्रिया को उद्घाटित करते हैं।

पिंगल और छंदात्मक विश्लेषण से यह सिद्ध होता है कि मात्रा-विन्यास, यति, तुकांत और ध्वनि-अलंकार केवल लयात्मकता के साधन नहीं हैं, बल्कि वे भाव-अभिव्यक्ति और अर्थ-निर्माण के सक्रिय उपकरण हैं। “मेरे नैनां म्ह तै, आँसू पड़ते...” जैसी पंक्तियों में करुणा की तीव्रता और “कर्मों के अनुसार मनुष्य नै मिलता सुख और लहणा” जैसी पंक्तियों में उपदेशात्मक प्रभाव छंद के माध्यम से अधिक सशक्त बनता है।

समग्रतः, यह अध्ययन सिद्ध करता है कि ये रागनियाँ केवल लोककथा का विस्तार नहीं, बल्कि एक गहन साहित्यिक, सांस्कृतिक और दार्शनिक अभिव्यक्ति हैं, जो हरियाणवी रागणी परंपरा की अकादमिक प्रासंगिकता को स्थापित करती हैं।

## संदर्भ सूची

- आशोधिया, आनन्द कुमार. (2025). *किस्सा भगत पूरणमल: हरियाणवी लोक रागनी संग्रह-समीक्षा सहित*. एसजैन पब्लिकेशन।
- आशोधिया, आनन्द कुमार. (2025). *हीर-राँझा रागणी संग्रह*. एसजैन पब्लिकेशन।
- आशोधिया, आनन्द कुमार. (2026). *हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 1-7 के संदर्भ में)*. द एकेडमिक, 4(3), 2261-2265।
- आशोधिया, आनन्द कुमार. (2026). *हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 8-16 के संदर्भ में)*. शोधपत्र: इंटरनेशनल जर्नल ऑफ साइंस एंड ह्यूमैनिटीज, 3(4), 154-159।
- आशोधिया, आनन्द कुमार. (2026). *हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 17-22 के संदर्भ में)*. द एकेडमिक, 4(4)। [प्रकाशनार्थ प्रेषित पांडुलिपि]।
- आशोधिया, आनन्द कुमार. (2026). *हीर-राँझा की हरियाणवी रागणी परंपरा: पिंगल शास्त्र के आलोक में एक सांस्कृतिक विश्लेषण (रागणी 23-28 के संदर्भ में)*. रिसर्च रिव्यू इंटरनेशनल जर्नल ऑफ मल्टीडिसिप्लिनरी। [प्रकाशनार्थ प्रेषित पांडुलिपि]।
- आशोधिया, आनन्द कुमार. (2026). *भक्ति, नैतिक प्रतिरोध और पिंगल छंद: हरियाणवी रागणी परंपरा में 'किस्सा भगत पूरणमल' का समालोचनात्मक अध्ययन (रागणी 1-8 के संदर्भ में)*. इंटरनेशनल जर्नल ऑफ हिंदी रिसर्च। [प्रकाशनार्थ प्रेषित पांडुलिपि]।
- बाख्तिन, मिखाइल. (1981). *द डायलॉजिक इमैजिनेशन: फोर एसेज़*. यूनिवर्सिटी ऑफ टेक्सास प्रेस।
- बार्थ, रोलां. (1977). *इमेज, म्यूज़िक, टेक्स्ट (एस. हीथ, अनुवादक)*. हिल एंड वांग।
- देवी, गणेश एन. (1991). *आफ्टर एम्प्रेशिया: ट्रेडिशन एंड चेंज इन इंडियन लिटरेरी क्रिटिसिज़्म*. ओरिएंट लॉन्गमैन।
- डंडेस, एलन. (1965). *द स्टडी ऑफ फोकलोर*. प्रेंटिस-हॉल।
- द्विवेदी, हजारी प्रसाद. (2003). *कबीर*. राजकमल प्रकाशन।
- द्विवेदी, हजारी प्रसाद. (2007). *नाथ संप्रदाय*. राजकमल प्रकाशन।
- इलियाड, मिर्चिया. (1969). *द केस्ट: हिस्ट्री एंड मीनिंग इन रिलिजन*. यूनिवर्सिटी ऑफ शिकागो प्रेस।
- फ्राय, नॉर्थ्रॉप. (1957). *एनाटॉमी ऑफ क्रिटिसिज़्म: फोर एसेज़*. प्रिन्सटन यूनिवर्सिटी प्रेस।
- गीर्ज़, क्लिफर्ड. (1973). *द इंटरप्रिटेशन ऑफ कल्चर्स*. बेसिक बुक्स।

हॉले, जॉन स्ट्रैटन. (2005). *श्री भक्ति वाँइसेज़: मीराबाई, सूरदास एंड कबीर इन देयर टाइम एंड आवर्स*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

कपूर, कपिल. (2000). *भारतीय साहित्य सिद्धांत*. भारतीय ज्ञानपीठ।

लुटगेनडॉर्फ, फिलिप. (1991). *द लाइफ ऑफ अ टेक्स्ट: परफॉर्मिंग द रामचरितमानस ऑफ तुलसीदास*. यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

मथाना, रघुवीर सिंह. (2005). *हरियाणवी लोक साहित्य और रागनी परंपरा*. हरियाणा साहित्य अकादमी।

मिश्र, विश्वनाथ प्रसाद. (1985). *हिंदी छंद प्रकाश*. लोकभारती प्रकाशन।

नागेन्द्र. (1980). *काव्य-बिंब*. नेशनल पब्लिशिंग हाउस।

नामवर सिंह. (1987). *इतिहास और आलोचना*. राजकमल प्रकाशन।

नारायण, किरण. (1997). *मंडेज़ ऑन द डार्क नाइट ऑफ द मून: हिमालयन फूटहिल फोकलोर*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

पोलॉक, शेल्डन. (2006). *द लैंग्वेज ऑफ द गॉड्स इन द वर्ल्ड ऑफ मेन: संस्कृत, कल्चर एंड पावर इन प्रीमॉडर्न इंडिया*. यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

रामानुजन, ए. के. (1999). *फोकटेल्स फ्रॉम इंडिया: अ सिलेक्शन ऑफ ओरल टेल्स फ्रॉम ट्वेंटी-टू लैंग्वेजेज़*. पेंगुइन बुक्स।

रिचमैन, पाउला (सम्पा.). (2001). *क्वेशनिंग रामायणाज़: अ साउथ एशियन ट्रैडिशन*. यूनिवर्सिटी ऑफ कैलिफोर्निया प्रेस।

शर्मा, केशव देव. (1998). *हरियाणवी लोकगीत और रागनियाँ*. हरियाणा साहित्य अकादमी।

शर्मा, रामशरण. (2009). *इंडियन फ्यूडलिज़्म*. मैकमिलन।

शुक्ल, रामचंद्र. (2002). *हिंदी साहित्य का इतिहास*. लोकभारती प्रकाशन।

सिंह, केदारनाथ. (1994). *आधुनिक हिंदी कविता में बिंब-विधान*. वाणी प्रकाशन।

स्नेल, रुपर्ट. (1991). *द हिंदी क्लासिकल ट्रैडिशन: अ ब्रज भाषा रीडर*. स्कूल ऑफ ओरिएंटल एंड अफ्रीकन स्टडीज़, यूनिवर्सिटी ऑफ लंदन।

तिवारी, रमेश. (2010). *लोक साहित्य के सिद्धांत*. राजकमल प्रकाशन।

टर्नर, विक्टर. (1969). *द रिचुअल प्रोसेस: स्ट्रक्चर एंड एंटी-स्ट्रक्चर*. एल्डाइन पब्लिशिंग।

वॉडविल, शार्लोट. (1974). *कबीर*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।

वाडले, सुसान एस. (2005). *राजा नल एंड द गॉडेस: द नॉर्थ इंडियन एपिक ढोला इन परफॉर्मेंस*. इंडियाना यूनिवर्सिटी प्रेस।

विलियम्स, रेमंड. (1977). *मार्क्सवाद और साहित्य*. ऑक्सफोर्ड यूनिवर्सिटी प्रेस।